देहली 5

दूसरी ज़िंदगी कोई रूपक नहीं है।

कुछ अभिव्यक्तियाँ हैं जिन्हें हम हल्के में इस्तेमाल करते हैं।

"मुझे लगता है मैं फिर से जन्मा हूँ।"

"मैंने नई शुरुआत की है।"

"वह एक नई ज़िंदगी थी।"

आम तौर पर ये रूपक होते हैं।

भाषा के अलंकार।

किसी बदलाव को बताने के सजीले ढंग।

फिर कुछ पल ऐसे आते हैं जब वे शब्द प्रतीक रहना बंद कर देते हैं।

और शाब्दिक हो जाते हैं।

बहुत समय तक मैंने ज़िंदगी को एक अटूट रेखा की तरह सोचा था।

उतार-चढ़ाव के साथ।

तेज़ी और सुस्ती के साथ।

सफलताओं और समस्याओं के साथ।

पर हमेशा वही रेखा।

हमेशा वही सफ़र।

फिर वह दिन आया जब मैंने समझा कि एक ज़िंदगी शरीर के मरे बिना भी थम सकती है।

दुनिया को देखने का एक नज़रिया थम सकता है।

एक पहचान।

एक सुरक्षा।

एक योजना।

अपनी एक छवि।

और जब ऐसा होता है, तो दूसरी ओर से निकलने वाला इंसान कभी वैसा नहीं होता जैसा भीतर गया था।

शुरू में इंसान डटे रहने की कोशिश करता है।

जो बचाया जा सकता है, उसे बचाने की कोशिश होती है।

मरम्मत करने की।

फिर से बनाने की।

सामान्य स्थिति में लौटने की।

यह एक स्वाभाविक प्रतिक्रिया है।

मैंने भी यही किया।

मैं निरंतरता वापस पाना चाहता था।

जो टूट गया था, उसे फिर से जोड़ना चाहता था।

उस 'पहले' में लौटना चाहता था।

फिर मैंने एक ऐसी बात समझी जिसे स्वीकार करना मुश्किल था।

वह 'पहले' अब था ही नहीं।

और उसके पीछे भागना बेकार था।

यह ज़िंदगी के सबसे महँगे सबक़ों में से एक है।

क्योंकि यह एक छोटा-सा शोक माँगता है।

उसका शोक, जो हम थे।

हम अक्सर उन लोगों की बात करते हैं जिन्हें हम खोते हैं।

उन पहचानों की बहुत कम, जिन्हें हम खोते हैं।

फिर भी वे भी एक अंतिम विदाई की हक़दार हैं।

एक पल आता है जब तुम वह बेटा नहीं रहते जो तुम थे।

वह पेशेवर जो तुम थे।

वह पुरुष जो तुम थे।

वह स्त्री जो तुम थीं।

एक पल आता है जब हमारा एक रूप अपना काम पूरा कर लेता है।

और किसी और चीज़ के लिए जगह छोड़ देता है।

जब मैं उस मौसम से गुज़रा, तो मुझे तुरंत इसका पता नहीं चला।

मैं सोचता था कि यह एक संकट है।

एक अंतराल।

एक हादसा।

बाद में ही समझा कि मैं एक रूपांतरण से गुज़र रहा था।

फ़र्क़ बहुत बड़ा है।

संकट वह है जिसे तुम ख़त्म करना चाहते हो।

रूपांतरण वह है जो तुम्हें हमेशा के लिए बदल देता है।

मुझे एक दौर याद है जब हर यक़ीन अधर में लटका लगता था।

पुराने जवाब अब काम नहीं करते थे।

पुराने औज़ार नाकाफ़ी लगते थे।

यहाँ तक कि कुछ लक्ष्यों ने अपना अर्थ खो दिया।

यह एक बेचैन कर देने वाला एहसास था।

जैसे किसी जाने-पहचाने परिदृश्य में चलते हुए पाना कि सारी सड़कों ने दिशा बदल ली है।

कुछ समय मैंने पुराने नक़्शों के सहारे राह पाने की कोशिश की।

काम नहीं आया।

क्योंकि बदला तो मैं था।

नक़्शे ग़लत नहीं थे।

वे पुराने पड़ चुके थे।

बड़े संक्रमणों में यही होता है।

समस्याएँ सिर्फ़ बदलती दुनिया से नहीं आतीं।

वे इस बात से आती हैं कि हम उसे उन आँखों से पढ़ते रहते हैं जो अतीत की हैं।

फिर, धीरे-धीरे, कुछ फिर से सध जाता है।

यह एक दिन में नहीं होता।

एक हफ़्ते में नहीं होता।

यह सैकड़ों छोटे-छोटे फेरबदलों से होता है।

नई चेतनाओं से।

नई प्राथमिकताओं से।

नए सवालों से।

एक सुबह तुम जागते हो और पाते हो कि तुम हक़ीक़त को अलग ढंग से देख रहे हो।

वही चीज़ें।

अलग आँखों से।

तभी मैंने पुनर्जन्म का असली अर्थ समझना शुरू किया।

वह फिर से जवान हो जाने में नहीं है।

दर्द मिटा देने में नहीं है।

ग़लतियाँ मिटा देने में नहीं है।

वह उस सबके साथ एक नया रिश्ता बनाने में है जो घट चुका है।

ज़ख़्मों के साथ।

डरों के साथ।

क्षतियों के साथ।

अवसरों के साथ।

ख़ुद समय के साथ।

दूसरी ज़िंदगी पहली के नकार से नहीं जन्मती।

उसके समाहित होने से जन्मती है।

जो कुछ तुम थे, वह सब बना रहता है।

पर अब वह वर्तमान पर राज नहीं करता।

वह अनुभव बन जाता है।

स्मृति बन जाता है।

निर्माण की सामग्री बन जाता है।

बहुत से लोग पुनर्जन्म को एक शानदार घटना की तरह सोचते हैं।

मैंने उसे अलग ढंग से जिया है।

एक धीमे पुनर्निर्माण की तरह।

एक बार में एक ईंट।

एक बार में एक विचार।

एक बार में एक फ़ैसला।

अक्सर ख़ामोशी में।

अक्सर बिना दर्शकों के।

अक्सर बिना किसी को भनक लगे कि क्या घट रहा है।

फिर भी वह घट रहा था।

चीज़ों की गहराई में।

समय बीतने के साथ मैं दूसरों को अलग नज़र से देखने लगा।

मैंने समझा कि लगभग सभी एक से ज़्यादा ज़िंदगियाँ जी रहे हैं।

ज़रूरी नहीं कि एक से ज़्यादा जैविक जीवन।

कई भीतरी अध्याय।

कई पहचानें।

कई रूपांतरण।

हम एक चेहरा देखते हैं और निरंतरता मान लेते हैं।

पर उस चेहरे के पीछे उसी इंसान के पाँच, दस, बीस अलग-अलग रूप हो सकते हैं।

सब असली।

सब बचे हुए।

सब ज़रूरी।

शायद इसीलिए उम्र के साथ करुणा और अहम हो जाती है।

क्योंकि हम दूसरों की अदृश्य लड़ाइयों का सम्मान करना सीख जाते हैं।

हम समझ जाते हैं कि कोई भी सिर्फ़ वह नहीं है जो दिखता है।

हर कोई अपने भीतर ढहने और फिर से बनने की एक कहानी लिए चलता है।

क्षतियों और पुनर्जन्मों की।

प्रतीकात्मक मौतों और नई शुरुआतों की।

पीछे मुड़कर देखता हूँ, तो उस दौर को आदर्श नहीं बनाता।

उसे दोबारा जीना नहीं चाहता।

वह मुश्किल था।

उलझा हुआ।

कभी-कभी दर्दनाक।

पर मैं उसका मूल्य पहचानता हूँ।

क्योंकि उस रूपांतरण से कोई ऐसा जन्मा जो पहले नहीं था।

कोई ज़्यादा सजग।

ज़्यादा चौकस।

ज़्यादा मानवीय।

शायद कम आश्वस्त।

पर कहीं ज़्यादा सच्चा।

और यही वह हिस्सा है जो मायने रखता है।

रास्ते के आख़िर में, जब मैं तय किया हुआ सफ़र देखता हूँ, तो मुझे एक अकेली ज़िंदगी नहीं दिखती।

कम से कम दो दिखती हैं।

पहली, उम्मीदों पर बनी।

दूसरी, समझ पर बनी।

पहली, करने पर टिकी।

दूसरी, होने पर ज़्यादा ध्यान देती हुई।

पहली, जानने के यक़ीन से भरी।

दूसरी, सुनने को तैयार।

इसीलिए इस देहली के शीर्षक में कोई अतिशयोक्ति नहीं है।

यह कोई काव्यात्मक वाक्य नहीं है।

कोई रूपक नहीं है।

यह एक सीधा तथ्य है।

क्योंकि कुछ पल ऐसे होते हैं जब हम सिर्फ़ दिशा नहीं बदलते।

हम अस्तित्व बदल देते हैं।

और जब यह सचमुच होता है, तो दूसरी ज़िंदगी कोई रूपक नहीं होती।

वह वही है जो तब बचता है जब पहली ज़िंदगी वह सब सिखा चुकी होती है जो वह सिखा सकती थी।